राजनैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक चिंतन का साप्ताहिक समाचार पत्र

शनि नेशनल्स टाइम्स

प्रज्ञा

संस्करण : नई दिल्ली व पाली राज. 29 सितंबर - 5 अक्टूबर 2011, वर्ष : 8, अंक : 43, साप्ताहिक, मूल्य : 2 रुपये, वार्षिक सदस्यता शुल्कः 250/-

web : www.shanidham.in

www.facebook.com/ shreeshanidham

शारदीय नवरात्र संवत् 2068 (28 सितंबर - 5 अक्टूबर 2011)

नवरात्रों में दुर्गापाठ व देवी की उपासना से होता है सभी विघ्नों व पैतृक दोषों का शमन

नवरात्र एक ऐसा अवसर है जब हर प्रकार की साधनाएं व अनुष्ठान पूरा फल प्रदान करते हैं। इस अवसर पर ग्रहबाधाओं के शमन और पितृ व पैतृक दोषों के परिहार के लिए भी अनुष्ठान आयोजित किये जाते हैं। पैतृक दोष भी पितृ दोष की तरह होता है। परंतु दोनों दोषों में काफी अंतर है। पितृ दोष में संतान सुख नहीं होता अर्थात संतान ही नहीं होती या अधिक आयु में संतान की प्राप्ति होती है और उसे बाल्य अवस्था में ही छोड़ कर जाना पड़ता है।

परंतु पैतृक दोष इससे अलग है। यह दोष कोई बड़ा पाप करने से लगता है। अर्थात सब कुछ होते हुए भी व्यक्ति जवान अवस्था में ही चला जाता है या अन्य परेशानियों से पीड़ित रहता है।

इस दोष से ग्रसित होने की स्थिति में जातक को व्यवसाय में हानि, नौकरी न मिलना और परेशानियों का सामना करना, संतान का विकलांग, अपाहिज या मानसिक रोगी होना, युवा अवस्था में विधवा-विधुर होना, या जवान पुत्रों से हाथ धो बैठना आदि प्रतिकूलताएं झेलनी पड़ती हैं। इस दोष से जातक को कैंसर, तपैदिक, कुष्ठ रोग, अस्थमा, एग्जीमा, गुप्त रोग आदि असाध्य रोग भी हो जाते हैं। ये दोष पीढ़ी दर पीढ़ी चलते रहते हैं।

हमारे देश के प्रथम प्रधान मंत्री व उनके बाद उनकी आने वाली पीढ़ी शक्तिशाली होते हुए भी जीवन का पूरा आनन्द न ले सकी है। ऐसी स्थिति को ही पैतृक दोष कहते हैं। इस प्रकार के पैतृक दोष का निवारण चैत्र व शारदीय नवरात्रों में किया जाता है और भगवती मां दुर्गा जी के चरित्र श्री दुर्गा सप्तशती का पाठ, हवन, भोग व भेंट देकर इस दोष का निवारण करते हैं। इस दोष में मुख्यतः ज्योतिषीय योगों में लग्न, लग्नेश, दशम, दशमेश व नवम भाव पीड़ित रहता है। ग्रहों में मुख्यतः गुरु व सूर्य पाप प्रभाव में होते हैं अर्थात लग्न, लग्नेश, सूर्य, गुरु, राहु, केतु व शनि द्वारा पीड़ित हैं तो जातक को रोग भी होता है। अधिकतर सभी जानते हैं कि कुछ रोग माता-पिता, भाई-बहन, पुत्र आदि सभी में समान रूप से होते हैं। ऐसे रोग पैतृक दोष के कारण होते हैं। रोग में प्रमुख है कुष्ठ रोग, कैंसर, क्षय, अस्थमा, एग्जीमा, अकाल मृत्यु।

यदि लग्न लग्नेश दशम दशमेश चन्द्रमा गुरु यदि राहु-केतु व शनि की दृष्टि या युति में है या नीच राशि में है, दशम भाव पर अशुभ प्रभाव है तो पैतृक दोष होता है।

पैतृक दोष निवारण संबंधी अनुष्ठान इसी महीने में होता है। इसलिए ज्यादा बारीकी में न उलझ कर संक्षेप में योग बता दिये हैं। अब जिसे परेशानी हो तो वे इस नवरात्र में इस दोष का निवारण करा सकते हैं।

प्रथम दिन घट स्थापना करके श्री दुर्गासप्तशती का पाठ विधिवत पूजन करके शुरू करना चाहिए और नौ दिन तक नौ देवियों की पूजा पाठ करना चाहिए।

यदि आप को रोग पीड़ा है तो रोग निवारण सम्पुट लगा कर दुर्गा सप्तशती का पाठ करना चाहिए।

सम्पुट है -

रोगानशेषानपहंसि तष्टा
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान्।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां
त्वमाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति॥

बाधा शांति के लिए

सर्वाबाधा प्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरि विनाशनम।।

दरिद्रता नाश के लिए

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्र्य दुःख भय हारिणि कात्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता॥

सभी प्रकार के मंगल कल्याण के लिए

सर्व मंगल मांगल्ये शिवे सर्वार्थसाद्धिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि
नमोऽस्तुते।।

किसी प्रकार का अचानक संकट आता हो तो ये सम्पुट लगा कर पाठ करें।

विपत्ति नाश के लिए

शरणागत दीनार्त परित्राणपरापण।
सर्वस्यार्तिहरे देवी नारायणी
नमोऽस्तुते।।

इन सम्पुटों से नौ दिन तक दुर्गा सप्तशती का पाठ करके विशेष हवन कराना चाहिए। हवन के बाद कन्याओं को भोजन कराना चाहिए और फिर पीपल के वृक्ष लगाने चाहिए। पैतृक दोष का निवारण नवरात्रों में ही होता है। यदि श्रद्धा भक्ति से उपाय कर भगवान से क्षमा मांगी जाए तो दोष से मुक्ति मिल जाती है।

दुर्गा पाठ की विधि -

यह विधि यहां संक्षिप्त रूप से दी जा रही है। नवरात्र आदि विशेष अवसरों पर तथा शतचण्डी आदि वृहद् अनुष्ठानों में विस्तृत विधि का उपयोग किया जाता है। उसमें यन्त्रस्थ कलश, गणेश, नवग्रह, मातृका, वास्तु, सप्तर्षि, सप्तचिरंजीव, 64 योगिनी, 50 क्षेत्रपाल तथा अन्यान्य देवताओं की वैदिक विधि से पूजा होती है। अखण्ड दीप की व्यवस्था की जाती है। देवीप्रतिमा की अंग-न्यास और अग्न्युत्तारण आदि विधि के साथ विधिवत् पूजा की जाती

शेष पेज 15 पर

व्रत-त्यौहार

1 अक्टूबर से 7 अक्टूबर 2011 तक (आश्विन शुक्ल पंचमी से एकादशी तक)

दि.	वार	तिथि	नक्षत्र	चन्द्र राशि	विशेष
01	शनि	पंचमी	अनु.	वृश्चिक	उपांग ललिता व्रत, भगवती स्कंदमाता पूजन
02	रवि	षष्ठी	ज्येष्ठा	धनु	महात्मा गांधी जयती, भगवती कात्यायनी पूजा
03	सोम	सप्तमी	मूल	धनु	सरस्वती आवहान, भगवती कालरात्रि पूजा
04	मंगल	अष्टमी	पू.षा.	धनु	महाअष्टमी, श्री दुर्गाष्टमी, भगवती महागौरी पूजा
05	बुध	नवमी	उ.षा.	मकर	महानवमी, शस्त्र पूजा, भगवती सिद्धिदात्री पूजा
06	गुरु	दशमी	श्रवण	मकर	विजयदशीम दशहरा, अपराजिता पूजा, सरस्वती विसर्जन, माधवाचार्य जंयती
07	शुक्र	एकादशी	घनि.	कुंभ	पापांकुशा एकादशी व्रत, भद्रा प्रातः 10.24 बजे से रात्रि 11.05 बजे तक

प्रज्ञा की संपूर्ण प्रस्तुति : श्री शनिधाम शिक्षा एवं शोध संस्थान, श्री शनिधाम ट्रस्ट , आसोला फतेहपुर बेरी, महरौली, नई दिल्ली। फोन : 26653500, 26654400, Web Site : www.shanidham.com E-mail: shaninationstimes@gmail.com

महादैत्य दुर्ग का संहार कर

दुर्गा बन गयी विंध्यवासिनी भवानी

पूर्वकाल में दुर्ग नामक एक महान दैत्य हुआ था, जो तीव्र तपस्या करके पुरुषमात्र से अवध्य होने का वरदान प्राप्त कर चुका था। पौराणिक कथाओं के अनुसार वह रूरू दैत्य का पुत्र था। उसने भूलोक, भुवर्लोक और स्वर्लोक आदि समस्त लोकों को बाहुबल से जीतकर अपने अधीन कर लिया था। उसके भय से पीड़ित होकर ब्राह्मण वेदाध्ययन नहीं कर पाते थे। उसके दुर्धर्ष सैनिकों ने यज्ञशालाओं का विध्वंस कर दिया था।

संसार में वे ही लोग धन्य हैं, जो विपत्ति में पड़ जाने पर भी दीनता से प्रेरित होकर धन से मलिन चित्त वाले पुरुषों के आंगन में कभी नहीं जाते। किसी के सामने छोटा न बनकर शान से मर जाना भी अच्छा है, परंतु संसार में लघुता (अपमान) से युक्त अमरत्व भी प्राप्त हो, तो वह अच्छा नहीं है। लोक में उन्हीं का जीवन सफल है और वे ही पुण्यात्मा हैं, जिनका चित्तरूपी समुद्र विपत्ति में भी गंभीरता का त्याग नहीं करता। जगत में कभी सम्पत्ति प्राप्त होती है और कभी विपत्ति। भाग्यवश इन दोनों को प्राप्त करके भी धीर पुरुष अपनी धीरता न छोड़ें। जो आपत्ति में पड़ने पर दीनताग्रस्त होकर मरता है, उसके इहलोक और परलोक दोनों नष्ट हो जाते हैं।

महा दैत्य दुर्ग द्वारा स्वर्ग का राज्य छिन जाने पर देवता लोग भगवान महेश्वर की शरण में गये। तब सर्वज्ञ शिवजी ने उस असुर का नाश करने के लिए देवी को आदेश दिया। भगवान महेश्वर की आज्ञा पाकर भवानी ने देव समूह को अभयदान देकर युद्ध के लिए उद्योग किया। उन्होंने रूद्रशक्ति कालरात्रि को बुलाकर उस देवद्रोही दैत्य को युद्ध के लिए ललकारने के निमित्त भेजा। कालरात्रि ने उस दैत्य के पास जाकर कहा -दैत्यराज! तू त्रिभुवन की सम्पत्ति का त्याग कर दे। त्रिलोकी का राज्य इन्द्र को प्राप्त हो और तू रसातल को चला जा, जिससे वेदवादियों की सम्पूर्ण वैदिक क्रियाएं बेरोक-टोक चलती रहें। यदि तुझे अपने बल का थोड़ा भी घमण्ड हो, तो युद्ध के लिए आ जा।

महाकाली का यह वचन सुनकर दैत्यराज दुर्ग क्रोध से जल उठा और सेवकों से बोला - पकड़ो, पकड़ लो इसे। अन्तःपुर के रक्षकों! इसे मेरे अन्तःपुर में ले जाओ। दैत्य की आज्ञा पाकर अन्तःपुर की रक्षा करने वाले सब खोजे उसे पकड़ने का उद्योग करने लगे, किंतु देवी ने उन्हें पास आते ही हुङ्कारजनित अग्नि से शीघ्र भस्म कर दिया। यह देख दैत्यराज दुर्ग ने तीस हजार दैत्यों को भेजा और कहा - दानवों! इस दुष्टा को पाश में बांधकर शीघ्र ले आओ।

बड़े-बड़े दैत्यों ने उसे पकड़ने का प्रयास किया, परंतु देवी के निःश्वास वायु से आहत होकर सब दूर चले गये। तदनन्तर देवी कालरात्रि वहां से उड़कर आकाशमार्ग से गमन करने लगीं। तब सहस्रों महादैत्य उनके पीछे लग गये। दैत्यराज दुर्ग ने भी दैत्यों की असंख्य सेना के साथ प्रस्थान किया। उस समय महादेवी विन्ध्याचल में निवास करती थीं। कालरात्रि ने वहां आकर देवी का दर्शन किया और दुर्ग के अपराध भी कह सुनाये। दैत्यराज दुर्ग ने भी महादेवी को देखकर अपने सेनापतियों को आदेश दिया - वीरों! तुममें से जो कोई भी धैर्य, बुद्धि, बल अथवा छल से भी इस विन्ध्यवासिनी को मेरे समीप ले आयेगा, उसे मैं अवश्य इन्द्र का पद दे दूंगा।

सब दैत्य एक ही साथ चल पड़े, सब ओर से रणभेरियां बज उठीं। दैत्यों का यह आक्रमण देखकर देवता भी भय से त्रस्त हो उठे, धरती कांपने लगी। तब महादेवी ने अपने श्रीअङ्गों से सहस्रों शक्तियों को प्रकट किया। उन शक्तियों ने इन महाबली दैत्यों की सेना के प्रत्येक सैनिक को आगे बढ़ने से रोक दिया।

दैत्यों ने मेघों के समान अनेक प्रकार के अस्त्रों, वृक्षों तथा पत्थरों की बड़ी भारी वर्षा की। यह देख विन्ध्यपर्वत पर निवास करने वाली महामाया ने प्रचण्ड धनुष लेकर उस पर वायव्यास्त्र का अनुसंधान किया और उसके द्वारा शस्त्रास्त्र समूहों को लीलापूर्वक दूर फेंक दिया। तब महासुर दुर्ग ने अपनी सेना को शस्त्रहीन देख एक जलती हुई शक्ति हाथ में ली और उसे देवी के ऊपर दे मारा, परन्तु देवी ने अपनी ओर आती हुई उस महावेगवती शक्ति को अपने धनुष से छूटे हुए बाणों द्वारा चूर्ण कर डाला। देवी ने अपने बायें पैर से से दैत्यराज की छाती में मारा। इससे दैत्यराज घायल होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा और उसके हृदय में बड़ी पीड़ा हुई। गिरने के बाद पुनः उसी क्षण वह उठकर खड़ा हुआ और सहसा अदृश्य हो गया। उस समय जगदम्बा की प्रेरणा से उनकी शक्तियां दैत्यों की सेना में इस प्रकार विचरण करने लगीं, जैसे प्रलयकाल में मृत्यु की सेना संसार में विचरण करती है। देवी की शक्तियों ने दैत्यों की विशाल सेना को उसी प्रकार नष्ट कर दिया, जैसे प्रलयाग्नि की लपटें समस्त संसार को दग्ध कर देती हैं। इतने में ही दैत्यराज दुर्ग बादलों की आड़ में खड़ा हो प्रचण्ड आंधी और बवण्डर के साथ ककंड़ पत्थरों की वर्षा करने लगा। तब महादेवी ने शोषणास्त्र का प्रयोग करके पानी और पत्थरों की वर्षा को क्षण भर में रोक दिया।

वह दैत्य हाथी का स्वरूप धारण करके अपने कुण्डमण्डित मस्तक को डुलाता हुआ शीघ्रतापूर्वक देवी के सम्मुख दौड़ा। उस पर्वताकार हाथी को आते देख भगवती ने शीघ्रतापूर्वक पाश से बांधकर उसकी सूंड को तलवार से काट डाला। तदनन्तर उसने भैंसे का स्वरूप धारण किया और अपने सींगों से पर्वतों को उखाड़कर देवी के ऊपर फैंका। उसके उपद्रव से समस्त ब्रह्माण्ड को व्याकुल देखकर भगवती ने दानव पर त्रिशूल से आघात किया। तब वह भैंसे का रूप छोड़कर सहस्र भुजाधारी पुरुष बन गया और देवी का हाथ पकड़कर उन्हें आकाश में खींच ले गया। वहां ऊंचे से उसने जगदम्बिका को छोड़ दिया और क्षण भर में बाणों के जाल से उन्हें आच्छादित कर दिया। जब महादेवी ने अपने बाणों से शरसमूह को काटकर एक महाबाण के द्वारा उस दैत्य को बींध डाला। देवी का वह बाण दैत्य की छाती में घुस गया, उसकी आंखें नाचने लगीं और वह अत्यंत व्याकुल होकर पृथ्वी पर गिर पडा। महापराक्रमी वह दैत्य हाथी का स्वरूप धारण करके अपने कुण्डमण्डित मस्तक को डुलाता हुआ शीघ्रतापूर्वक देवी के सम्मुख दौड़ा। उस पर्वताकार हाथी को आते देख भगवती ने शीघ्रतापूर्वक पाश से बांधकर उसकी सूंड को तलवार से काट डाला। तदनन्तर उसने भैंसे का स्वरूप धारण किया और अपने सींगों से पर्वतों को उखाड़कर देवी के ऊपर फैंका। उसके उपद्रव से समस्त ब्रह्माण्ड को व्याकुल देखकर भगवती ने दानव पर त्रिशूल से आघात किया। तब वह भैंसे का रूप छोड़कर सहस्र भुजाधारी पुरुष बन गया और देवी का हाथ पकड़कर उन्हें आकाश में खींच ले गया। वहां ऊंचे से उसने जगदम्बिका को छोड़ दिया और क्षण भर में बाणों के जाल से उन्हें आच्छादित कर दिया। जब महादेवी ने अपने बाणों से शरसमूह को काटकर एक महाबाण के द्वारा उस दैत्य को बींध डाला। देवी का वह बाण दैत्य की छाती में घुस गया, उसकी आंखें नाचने लगीं और वह अत्यंत व्याकुल होकर पृथ्वी पर गिर पडा। महापराक्रमी दुर्ग के गिरते ही देवताओं की दुन्दुभियां बजने लगीं। समस्त संसार में उल्लास छा गया। सूर्य, चन्द्रमा और अग्निदेव को अपने खोये हुए तेज की प्राप्ति हुई। तदनन्तर सब देवता फूलों की वर्षा करते हुए महर्षियों के साथ वहां आये और महादेवी की स्तुति करने लगे। देवता बोले - महादेवी! तुम्हें नमस्कार है। तीनों लोकों की उत्पत्ति की आधारभूता महामहेश्वर की शक्ति! तुम दैत्य रूप की वृक्षों को काटने के लिए कुठार हो, तुम्हें नमस्कार है। त्रैलोक्य-व्यापिनी कल्याणमयी शिवे! तुम्हें नमस्कार है। शङ्ख, चक्र और गदा धारण करने वाली तथा अपने व्यग्र हाथों में शार्ङ्ग - धनुष को उठाने वाली विष्णुस्वरूपे देवि! तुम्हें नमस्कार है। सबकी सृष्टि करने वाली, प्राचीनों की भाषा, संस्कृति की जन्मभूमि तथा हंस की सवारी से यात्रा करने वाली चतुराननस्वरुपे देवि! तुम्हें नमस्कार है। तुम्हीं इन्द्र, कुबेर, वायु, वरुण, यम, निर्ऋति, ईशान और अग्नि की शक्ति हो, तुम्हीं चन्द्रमा की चांदनी और सूर्य की शक्ति प्रभा हो। तुम्हीं सर्वदेवमयी शक्ति और तुम्हीं परमेश्वरी हो। प्रणतजनों को सदा शरण देने वाली देवि! मातः! आज तुमने महादैत्यपति दुर्ग को, जो स्वभाव से ही देवताओं के विरूद्ध दैत्यसेना को प्रेरित करता रहता था, मारकर हमारी रक्षा की है। तुम्हारे सिवा दूसरा कौन है, जिसकी शरण में हम जायें? तुम्हीं हमें शरण देने वाली हो। हम तुम्हारे चरणों में नतमस्तक हैं, तुम सदा सब ओर से हमारी रक्षा करो। भवानी! तुम प्रतिक्षण पग-पग पर विपत्तियों से हम सबकी रक्षा करो। इस प्रकार जगदम्बा की स्तुति करके ऋषि, गन्धर्व और चारणों सहित इन्द्र आदि सम्पूर्ण देवतओं ने जगदम्बा के चरणों में बारम्बार प्रणाम किया। तब संतुष्ट हुई जगन्माता महादेवी ने उन श्रेष्ठ देवताओं से कहा - आज से सब देवता पहले की भांति अपने-अपने अधिकारों का पालन करें। मैं बहुत संतुष्ट हूं, अतः तुम्हें दूसरा वरदान देती हूं। जो मनुष्य पवित्र भाव से भक्तिपूर्वक इस स्तुति द्वारा मेरा स्तवन करेगा, उसकी विपत्ति का मैं पग-पग पर नाश करूंगी। संग्राम में अत्यंत दुर्गम दुर्ग नामक दैत्य को मार गिराने के कारण आज से मेरा दुर्गा नाम प्रसिद्ध होगा। जो मुझ दुर्गा की शरण में आयेंगे उनकी कभी दुर्गति नहीं होगी। यह वज्रपिञ्जर नामवली दुर्गास्तुति पुण्य की वृद्धि करने वाली है।

देवताओं को इस प्रकार वरदान देकर महादेवी उसी समय अन्तर्धान हो गयी और स्वर्गवासी देवता भी अपने अपने स्थान को चले गये।

नवरात्र में भगवती पूजा अनुष्ठान

कुंडलिनी जागरण की सहज साधना है

यह विधि यहाँ संक्षिप्त रूपसे दी जा रही है। नवरात्र आदि विशेष अवसरों पर तथा शतचंडी आदि अनुष्ठानों में विस्तृत विधि का उपयोग किया जाता है। उसमें यन्त्रस्थ कलश, गणेश, नवग्रह, मातृ का, वास्तु, सप्तर्षि, सप्तचिरंजीव, 64 योगिनी, 50 क्षेत्रपाल तथा अन्यान्य देवताओं की वैदिक विधि से पूजा होती है। अखण्ड दीप की व्यवस्था की जाती है। देवीप्रतिमा की अङ्ग-न्यास और अग्न्युत्तारण आदि विधि के साथ विधिवत् पूजा की जाती है। नवदुर्गापूजा ज्योतिःपूजा, वटुक-गणेशादिसहित कुमारीपूजा, अभिषेक, नान्दीश्राद्ध, रक्षाबन्धन, पुण्याहवाचन, मङ्गलपाठ, गुरुपूजा, तीर्थावाहन, मन्त्र-स्नान आदि, आसनशुद्धि, प्राणायाम, भूतशुद्धि, प्राणायाम, भूतशुद्धि, प्राणप्रतिष्ठा, अन्तर्मातृकान्यास, बहिर्मातृकान्यास, सृष्टिन्यास, स्थितिन्यास, शक्तिकलान्यास, शिवकलान्यास, हृदयादिन्यास, षोढान्यास, विलोमन्यास, तत्त्वन्यास, अक्षरन्यास, व्यापकन्यास, ध्यान, पीठपूजा आदि का शास्त्रीय पद्धति के अनुसार अनुष्ठान होता है। इस प्रकार विस्तृत विधि से पूजा करने की इच्छावाले भक्तों को अन्यान्य पूजा-पद्धतियों की सहायतासे भगवती की आराधना करके पाठ आरम्भ करना चाहिये।

अब देवी भागवत पुराण में भगवती पूजा की जो पूजा विधि वह फलश्रुति स्वयं श्री देवी ने बताया है उसे आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूं।

प्रातःकाल उठकर अपने मस्तक में जो ब्रह्मरन्ध्र है, उसपर एक स्वच्छ सहस्त्रदल कमल का चिन्तन करे। ध्यान यों होना चाहिये-यह कमल कपूर के समान श्वेत वर्ण का है। मेरे लौकिक गुरु के समान आकारवाले महाभाग गुरुदेव इस कमल के आसनपर विराजमान हैं। इनका मुख परम प्रसन्न है। इनकी शक्ति भी साथ बैठी हैं। ध्यानोपरान्त प्रणाम करके पण्डितजन कुंडलिनी में देवी का ध्यान करें- ये ही देवी प्रथव प्रयाण में अर्थात् जव ब्रह्मरन्ध्रपर पधारी थीं, तब इनका रूप एक प्रकाश-पुञ्ज-सा था। फिर कुण्डलिनी में पधारनेपर ये अमृतस्वरूपिणी बन गयी हैं। अन्तःपद में अर्थात् सुषुम्ण नाड़ी में विराजते समय ये ही परम शक्ति एक अबला स्त्री के रूप में दर्शन दे रही हैं। इनका रूप परम आनन्दमय है। अतः मैं इनकी शरण ग्रहण करता हूँ।

इस प्रकार ध्यान करने के पश्चात् कुंडलिनी शिखा के मध्य में मुझ सच्चिदानन्दस्वरूपिणी देवी का ध्यान करे। ये सभी क्रियाएँ संध्या वन्दन के अन्त में पूर्ण करनी चाहिये। इसके बाद श्रेष्ठ द्विज मुझे प्रसन्न करने के लिये अग्निहोत्र करें। होम करने के उपरान्त अपने आसनपर बैठकर मेरी पूजा में संलग्न हो जायँ।

पहले भूतशुद्धि करके फिर मातृकान्यास करना चाहिये। मातृकान्यास पहले रं इस मायाबीज का उल्लेख अनिवार्य है। पूजा में प्रतिदिन यह न्यास होना चाहिये।

मूलाधार में हकार, हृदय में रकार, भ्रूके मध्य में ईकार तथा मस्तक में ह्रींकार का न्यास करे। तत्-तत् मन्त्र के कथनानुसार अन्य सभी न्यासोंकी विधि सम्पन्न करनी चाहिये। ऐसी कल्पना करे कि मेरे इस शरीर में ही एक दिव्य पीठ है। धर्म आदि सभी मूर्तिमान् होकर साथ विराजमान हैं। तत्पश्चात् विज्ञ पुरुष यों ध्यान करे- प्राणायाम के प्रभाव से मेरा हृदयरूपी कमल खिल उठा है। यह एक पञ्चप्रेतासन है। इस दिव्य आसनपर महादेवी विराजमान हैं।

ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव-ये पाँचों देवता पञ्चमहाप्रेत कहे जाते हैं। मेरे पादमूल में ये रहते हैं -अर्थात् मेरे मंच के ये चार तो पाये हैं और एक फलक। पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश-इन पाँच भूतों तथा जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीय एवं अतीत-इन पाँच अवस्थाओं के ये व्यवस्थापक हैं।

मेरा चिन्मय रूप तो अव्यक्त है। मैं इन अवस्थाओं से सर्वथा परे हूँ। शक्ति तन्त्र में ब्रह्मा प्रभृति का विष्टर रूप से परिणत होना प्रसिद्ध है। यों निरन्तर ध्यान करके मानसिक भोग-सामग्रियों से मेरी पूजा और जप भी सम्पन्न करे। फिर मुझ श्रीदेवी को जप अर्पण करके अर्घ्य देने की व्यवस्था करे। सर्वप्रथम पूजा के सभी पात्र सामने रख ले। पूजा में आनेवाली वस्तुओं को अस्त्रमन्त्र अर्थात् ॐ फट् इस मन्त्र का उच्चारण करके शुद्ध करे। दिग्बन्ध भी इसी मन्त्र से करना चाहिये। यह सब कृत्य समाप्त करके गुरुदेव को प्रणाम करे। फिर मेरी आज्ञा के अनुसार बाह्यपूजा की तैयारी करनी चाहिये।

साधक के हृदय में मेरी जो दिव्य मनोहर मूर्ति बसी हो, उसी का बाह्यपीठपर आवाहन करे। फिर, वेदमन्त्रद्वारा प्राणप्रतिष्ठा करना आवश्यक है। आसन, आवाहन, अर्घ्य, पाद्य, आचमन, स्नान और वस्त्रदान-ये विधियाँ क्रमशः संपन्न करे। दो वस्त्र अर्पण किये जायँ। भूषणों से शृङ्गार करे। सब प्रकार की गन्ध, पुष्प आदि यथायोग्य वस्तुएँ अपनी भक्ति के अनुसार देवी को समर्पित करे। इसके बाद मन्त्र में लिखित आवरण देवताओं का सविधि पूजन होना चाहिये। जो प्रतिदिन पूजा न कर सकते हों, वे शुक्रवार को पूजा करने का अनिवार्य नियम बना लें।

अब उपर्युक्त आवरण देवताओं के प्रसंग बताती हूँ - पहले मूल देवी की भावना करे। ये देवी परम प्रकाशमय हैं। इनका प्रकाशपुञ्ज त्रिलोकी में व्याप्त है। यों चिन्तन करके आसन-पाद्य आदि यथायोग्य उपचारों से अङ्गदेवताओं को सुपूजित करने के उपरान्त पुनः मुझ मूल देवी की पूजा करनी चाहिए। पुष्प, चन्दन, धूप, वस्त्र, नैवेद्य, तर्पण, ताम्बूल और दक्षिणा आदि से मुझे संतुष्ट करना आवश्यक है।

सहस्त्रनाम से मैं बहुत प्रसन्न होती हूँ। कवच तथा अहं रुद्रेभिः इस सूक्त से एवं देव्यथर्वशीर्ष के मंत्रों और महाविद्या संज्ञक प्रधान मंत्रों से बार-बार मुझे प्रसन्न करे। इसके बाद पुरुष को चाहिए, अपना हृदय प्रेम रस से स्निग्ध करके मुझ जगदम्बा के प्रति अपराध क्षमा होने के आँखों में आँसू आ जाय। कण्ठ से बोला न जा सके। बारम्बार नाच और गाकर मुझे संतुष्ट करे।

सम्पूर्ण वेद और पुराण मेरे ही सुयश का बखान करते हैं। कारण, मैं उनकी अधिष्ठात्री हूँ। अतः उन वेदों एवं पुराणों के सहयोग से मुझे संतुष्ट करना चाहिए। अपना सर्वस्व यहाँ तक कि अपने शरीर को भी मुझे नित्य अर्पण कर दे। तदनन्तर नित्य होम करे। ब्रह्मण तथा सुहागिनी स्त्रियों को भोजन कराया जाय। छोटे-छोटे अज्ञानी बालको को भी देवी का रूप मानकर उन्हें भोजन कराना चाहिए। नमस्कार के पश्चात अपने हृदय में जिस क्रम से जिसका आवाहन आदि किया हो, ठीक उसी के विपरीत क्रम से विसर्जन करे।

मेरी सारी पूजा हल्ले खा (ह्रींकार) मंत्र से सम्पन्न हो जाती है क्योंकि यह मंत्र सम्पूर्ण मंत्रों का अधिष्ठाता कहा गया है। यह मंत्र दर्पण सा है। मेरा प्रतिबिम्ब निरन्तर इसमें झलकता है। अतः इस मंत्र का उच्चारण करके दिया हुआ पदार्थ सम्पूर्ण मंत्रों से अर्पित समझा जाता है। फिर भूषण आदि श्रेष्ठ सामग्रियों से गुरुदेव की भलीभाँति पूजा करके स्वयं कृतकृत्य हो जाय। जो इस प्रकार मुझ त्रिभुवनसुन्दरी देवी की उपासना करता है, उसके लिए कभी कोई वस्तु न दुर्लभ रही और न कभी रह सकती है। आयु समाप्त होने पर वह बड़भागी व्यक्ति सीधे मेरे मणिद्वीप में पहुंचता है। उसे मेरा स्वरूप ही समझना चाहिए। देवतालोग नित्य उसको प्रणाम करते हैं।

सर्व संकटहारी दुर्गा-कवच

विपरीत से विपरीत परिस्थितियों में भी सफलता व विजय दिलाने वाला दुर्गा कवच हर प्रकार के संकटों के निवारण व भक्तों के मनोरथ विद्ध करने में अद्वितीय है। सबसे पहले यह कवच श्रीकृष्ण ने गोलोक में ब्रह्मा जी को प्रदान किया था। पौराणिक गाथाओं के अनुसार इस कवच को पूर्वकाल में त्रिपुर-संग्राम के अवसर पर ब्रह्मा जी ने शंकर को दिया, जिसे भक्तिपूर्वक धारण करके रुद्र ने त्रिपुर का संहार किया था। फिर शंकर ने इसे गौतम को और गौतम ने पद्माक्ष को दिया, जिसके प्रभाव से विजयी पद्माक्ष सातों द्वीपों का अधिपति हो गया। जिसके पढ़ने एवं धारण करने से ब्रह्मा भूतल पर ज्ञानवान और शक्ति सम्पन्न हो गये। जिसके प्रभाव से शिव सर्वज्ञ और योगियों के गुरु हुए और मुनिश्रेष्ठ गौतम शिव-तुल्य माने गये। इस कवच के प्रजापति ऋषि हैं। गायत्री छन्द है। दुर्गतिनाशिनी दुर्गा देवी हैं और ब्रह्माण्डविजय के लिए इसका विनियोग किया जाता है। यह परम अद्भुत कवच महापुरुषों का पुण्यतीर्थ है।

ॐ ह्रीं दुर्गतिनाशिन्यै स्वाहा मे पातु मस्तकम्।
ॐ ह्रीं मे पातु कपालं च ॐ ह्रीं श्रीमिति लोचने॥

पातु मे कर्णयुग्मं च ॐ दुर्गायै नमः सदा।
ॐ ह्रीं श्रीमिति नासां मे सदा पातु च सर्वतः॥

ह्रीं श्रीं हू मिति दन्तानि पातु क्लीमोष्ठयुग्मकम्।
क्रीं क्रीं क्रीं पातु कण्ठं च दुर्गे रक्षतु गण्डकम्॥

स्कन्धं दुर्गविनाशिन्यै स्वाहा पातु निरन्तरम्।
वक्षो विपद्विनाशिन्यै स्वाहा मे पातु सर्वतः॥

दुर्गे दुर्गे रक्षणीति स्वाहा नाभि सदाऽवतु।
दुर्गे दुर्गे रक्ष रक्ष पृष्ठं मे पातु सर्वतः॥

ॐ ह्रीं दुर्गायै स्वाहा च हस्तौ पादौ सदाऽवतु।
ॐ ह्रीं दुर्गायै स्वाहा च सर्वांग मे सदाऽवतु॥

प्राच्यां पातु महामाया आग्नेय्यां पातु कालिका।
दक्षिणे दक्षकन्या च नैर्ऋत्यां शिवसुन्दरी॥

पश्चिमे पार्वती पातु वाराही वारुणे सदा।
कुबेरमाता कौबेर्य्यामैशान्यामीश्वरी सदा॥

ऊर्ध्वे नारायणी पातु अम्बिकाथः सदाऽवतु।
ज्ञाने ज्ञानप्रदा पातु स्वप्ने निद्रा सदाऽवतु॥

जो विधिपूर्वक वस्त्र, अलंकार और चन्दन से गुरु की पूजा करके इस कवच को गले में अथवा दाहिनी भुजा पर धारण करता है, वह सम्पूर्ण शत्रुओं का मर्दन करने वाला तथा त्रिलोकविजयी होता है। यह काण्वशास्त्रोक्त सुन्दर कवच परम गोपनीय तथा अत्यन्त दुर्लभ है। योग्य मार्गदर्शक गुरु से इसकी शास्त्रोक्त विधि सीख कर नवरात्रों में सिद्ध कर लेना चाहिए।

भगवती दुर्गा के नव स्वरूपों की उपासना से होता है भक्तों का हर मनोरथ पूरा

ॐ स्कन्दमाता देव्यै नमः

नवरात्र के पुण्य पर्व पर पांचवें दिन मां स्कंद माता की पूजा, अर्चना एवं साधना का विधान वर्णित है। मां के पांचवें स्वरूप को स्कंद माता के नाम से जाना जाता है। पांचवें दिन की पूजा साधना में साधक अपने मन-मस्तिष्क को विशुद्ध चक्र में स्थित करते हैं। स्कंद माता स्वरूपिणी भगवती की चार भुजाएं हैं। सिंहारूढ़ा मां पूर्णतः शुभ हैं। साधक मां की आराधना में निरत रहकर निर्मल चैतन्य रूप की ओर अग्रसर होता है। उसका मन भौतिक काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद (अहंकार) से मुक्ति प्राप्त करता है तथा पद्मासना मां के श्री चरण कमलों में समाहित हो जाता है। मां की उपासना से मन की सारी कुण्ठा जीवन-कलह और द्वेष भाव समाप्त हो जाता है। मृत्यु लोक में ही स्वर्ग की भांति परम शांति एवं सुख का अनुभव प्राप्त होता है। साधना के पूर्ण होने पर मोक्ष का मार्ग स्वतः ही खुल जाता है।

मां की उपासना के साथ ही भगवान स्कंद की उपासना स्वयं ही पूर्ण हो जाती है। क्योंकि भगवान बालस्वरूप में सदा ही अपनी मां की गोद में विराजमान रहते हैं। भवसागर के दुःखों से छुटकारा पाने के लिए इससे दूसरा सुलभ साधन कोई नहीं है।

साधना विधान - सर्व प्रथम मां स्कंद माता की मूर्ति अथवा तस्वीर को लकड़ी की चौकी पर पीले वस्त्र को बिछाकर उस पर कुंकुम से ॐ लिखकर स्थापित करें। मनोकामना की पूर्णता के लिए चौकी पर मनोकामना गुटिका रखें। हाथ में पीले पुष्प लेकर मां स्कंद माता के दिव्य ज्योति स्वरूप का ध्यान करें।

ध्यान मंत्र -

सिंहासनागता नित्यं पद्माश्रित कर द्वया।
शुभदास्तु सदा देवी स्कंद माता यशस्विनी॥

ध्यान के बाद हाथ के पुष्प चौकी पर छोड़ दें। तदुपरांत यंत्र तथा मनोकमना गुटिका सहित मां का पंचोपचार विधि द्वारा पूजन करें। पीले नैवेद्य का भोग लगाएं तथा पीले फल चढ़ाएं। इसके बाद मां के श्री चरणों में प्रार्थना कर आरती पुष्पांजली समर्पित करें तथा भजन कीर्तन करें।

ॐ कात्यायनी देव्यै नमः

नवरात्र के पावन समय में छठवें दिन अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष को प्रदान करने वाली भगवती कात्यायनी की पूजा वंदना का विधान है। साधक, आराधकजन इस दिन मां का स्मरण करते हुए अपने मन को आज्ञा चक्र में समाहित करते हैं। योग साधना में आज्ञा चक्र का बड़ा महत्व होता है। मां की षष्ठम् शक्ति कात्यायनी नाम का रहस्य है। एक कत नाम के ऋषि थे। उनके पुत्र ऋषि कात्य हुए इन्हीं कात्य गोत्र में महर्षि कात्यायन हुए उनके कठोर तपस्या के फलस्वरूप उनकी इच्छानुसार भगवती ने उनके यहां पुत्री के रूप में जन्म लिया। आश्विन कृष्ण चतुर्दशी को जन्मी भगवती शुक्ल पक्ष की सप्तमी, अष्टमी और नवमी तक ऋषि कात्यायन की पूजा ग्रहण की और दशमी के दिन महिषासुर का वध किया था। इसी कारण छठी देवी का नाम कात्यायनी पड़ा।

मां कात्यायनी का स्वरूप अत्यंत विशाल एवं दिव्य है। उनकी चार भुजाएं हैं। एक हाथ वर मुद्रा में, दूसरा हाथ अभय मुद्रा में, तीसरे हाथ में सुंदर कमल पुष्प और चौथे हाथ में खड्ग धारण किये हुए हैं। मां सिंह पर सवार हैं। जो मनुष्य मन, कर्म, व वचन से मां की उपासना करते हैं उन्हें मां धन-धान्य से परिपूर्ण एवं भयमुक्त करती हैं।

साधना विधान - सबसे पहले मां कात्यायनी की मूर्ति या तस्वीर को लकड़ी की चौकी पर लाल वस्त्र बिछाकर स्थापित करें।

तदुपरांत चौकी पर मनोकामना गुटिका रखें। दीपक प्रज्वलित रखें। तदुपरांत हाथ में लाल पुष्प लेकर मां का ध्यान करें।

ध्यान मंत्र -

चन्द्रा हासोज्वल करा शार्दूलवर वाहना।
कात्यायनी शुभं दद्यात् देवी दानव घातिनी॥

इसके बाद मां को हाथ में लिए हुए पुष्प अर्पण करें तथा मां का षोडशोपचार से पूजन करें। नैवेद्य चढ़ाएं तथा 108 की संख्या में मंत्र जाप करें -

मंत्र - ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे।

मंत्र की समाप्ति पर मां की प्रार्थना तथा आरती करें।

ॐ कालरात्रि देव्यै नमः

नवरात्र के सातवें दिन आदि शक्ति मां कालरात्रि की पूजा-अर्चना का विधान है। व्यापार संबंधी समस्या, ऋण मुक्ति एवं अचल संपत्ति के लिए मां कालरात्रि की पूजा का विशेष महत्व बताया जाता है। देखने में मां का स्वरूप विकराल है। परंतु मां सदैव ही शुभ फल प्रदान करती हैं। इस दिन साधकगण अपने मन को सहस्रार चक्र में स्थित करते हैं और मां की अनुकंपा से उन्हें ब्रह्मांड की समस्त सिद्धियां प्राप्त होती है। मां कालरात्रि की पूजा-अर्चना एवं साधना द्वारा अकाल मृत्यु, भूत-प्रेत बाधा, व्यापार, नौकरी, अग्निभय, शत्रुभय आदि से छुटकारा प्राप्त होता है।

साधना विधान - सर्वप्रथम लकड़ी की चौकी पर लाल वस्त्र बिछाकर मां कालरात्रि की मूर्ति अथवा तस्वीर स्थापित करें तथा चौकी पर कालरात्रि यंत्र को रखें। तदुपरांत हाथ में पुष्प लेकर मां कालरात्रि का ध्यान आह्वान करें। यदि मां की छवि ध्यान अवस्था में विकराल नजर आयें तो घबराएं नहीं बल्कि मां के चरणों में ध्यान एकाग्र करें। मां का स्वरूप देखने में भले ही विकराल है परंतु हर प्रकार से मंगल कारक है।

ध्यान मंत्र -

कराल रूपा कालाब्जा समानाकृति विग्रहा।
कालरात्रि शुभ दधद् देवी चण्डाट्टहासिनी॥

ध्यान के बाद हाथ के पुष्प मां को अर्पण कर दें तथा मां कालरात्रि एवं यंत्र का पंचोपचार से पूजन करें तथा नैवेद्य का भोग लगाएं।

इसके बाद मां का मंत्र जाप नौ माला की संख्या में पूर्ण करें -

मंत्र - लीं लीं हुं। मनोकामना के लिए मां से प्रार्थना करें। तदुपरांत मां की आरती और कीर्तन करें।

ॐ महागौरी देव्यै नमः

नवरात्र के आठवें दिन मां के आठवें स्वरूप महागौरी की उपासना की जाती है इस दिन साधक विशेष तौर पर साधना में मूलाधर से लेकर सहस्रार चक्र तक विधि पूर्वक सफल हो गये होते हैं। उनकी कुंडलिनी जाग्रत हो चुकी होती हैं तथा अष्टम् दिवस महागौरी की उपासना एवं आराधना उनकी साधना शक्ति को और भी बल प्रदान करती है। मां की चार भुजाएं हैं तथा वे अपने एक हाथ में त्रिशुल धारण किये हुए हैं, दूसरे हाथ से अभय मुद्रा में हैं, तीसरे हाथ में डमरू सुशोभित है तथा चौथा हाथ वर मुद्रा में है। मां का वाहन वृष है। अपने पूर्व जन्म में मां ने पार्वती रूप में भगवान शंकर को पति रूप में प्राप्त करने के लिए कठोर तपस्या की थी तथा शिव जी को पति स्वरूप प्राप्त किया था। मां की उपासना से मन पसंद जीवन साथी एवं शीघ्र विवाह संपन्न होगा। मां कुंवारी कन्याओं से शीघ्र प्रसन्न होकर उन्हें मन चाहा जीवन साथी प्राप्त होने का वरदान देती हैं। इसमें मेरा निजी अनुभव है मैंने अनेक कुंवारी कन्याओं को जिनकी वैवाहिक समस्याएं थी उनसे भगवती गौरी की पूजा-अर्चना करवाकर विवाह संपन्न करवाया है। यदि किसी के विवाह में विलम्ब हो रहा हो तो वह भगवती महागौरी की साधना करें मनोरथ पूर्ण होगा।

साधना विधान - सर्वप्रथम लकड़ी की चौकी पर या मंदिर में महागौरी की मूर्ति अथवा तस्वीर स्थापित करें तदुपरांत चौकी पर सफेद वस्त्र बिछाकर उस पर महागौरी यंत्र रखें तथा यंत्र की स्थापना करें। मां सौंदर्य प्रदान करने वाली हैं। हाथ में श्वेत पुष्प लेकर मां का ध्यान करें।

ध्यान मंत्र -

श्वेत वृष समारूढ़ा श्वेताम्बर धरा शुचिः।
महागौरी शुभम् दद्यान्महादेव प्रमोददा॥

ध्यान के बाद मां के श्री चरणों में पुष्प अर्पित करें तथा यंत्र सहित मां भगवती का पंचोपचार विधि से अथवा षोडशोपचार विधि से पूजन करें तथा दूध से बने नैवेद्य का भोग लगाएं। तत्पश्चात् ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे। मंत्र की तथा साथ में ॐ महा गौरी देव्यै नमः मंत्र की इक्कीस माला जाप करें तथा मनोकामना पूर्ति के लिए मां से प्रार्थना करें। अंत में मां की आरती और कीर्तन करें।

शेष पेज 15 पर

भगवती के दश महाविद्या स्वरूप : संक्षिप्त परिचय व उपासना विधि

।। भुवनेश्वरी ।।

देवी भागवत में वर्णित मणिद्वीप की अधिष्ठात्री देवी हृल्लेखा (ह्रीं) मंत्र की स्वरूपाशक्ति और सृष्टिक्रम में महालक्ष्मी स्वरूपा- आदिशक्ति भगवती भुवनेश्वरी भगवान शिव के समस्त लीला-विलास की सहचरी हैं।

जगदम्बा भुवनेश्वरी का स्वरूप सौम्य और अंगकांति अरुण है। भक्तों को अभय और समस्त सिद्धियाँ प्रदान करना इनका स्वाभाविक गुण है। दशमहाविद्याओं में ये पाँचवें स्थान पर परिगणित हैं। देवी पुराण के अनुसार मूल प्रकृति का दूसरा नाम ही भुवनेश्वरी है। ईश्वररात्रि में जब ईश्वर के जगद्रूप व्यवहार का लोप हो जाता है, उस समय केवल ब्रह्म अपनी अव्यक्त प्रकृति के साथ शेष रहता है, तब ईश्वररात्रि की अधिष्ठात्री देवी भुवनेश्वरी कहलाती हैं।

अंकुश और पाश इनके मुख्य आयुध हैं। अंकुश नियंत्रण का प्रतीक है और पाश राग अथवा आसक्ति का प्रतीक है। इस प्रकार सर्वरूपा मूल प्रकृति ही भुवनेश्वरी हैं, जो विश्व को वमन करने के कारण वामा, शिवमयी होने से ज्येष्ठा तथा कर्म-नियंत्रण, फलदान और जीवों को दंडित करने के कारण रौद्री कही जाती है। भगवान शिव का वाम भाग ही भुवनेश्वरी कहलाता है। भुवनेश्वरी के संग से ही भुवनेश्वर सदाशिव को सर्वेश होने की योग्यता प्राप्त होती है।

महानिर्वाण तंत्र के अनुसार संपूर्ण महाविद्याएँ भगवती भुवनेश्वरी की सेवा में संलग्न रहती हैं। सात करोड़ महामंत्र इनकी सदा आराधना करते हैं। दशमहाविद्याएँ ही दस सोपान हैं। काली तत्व से निर्गत होकर कमला तत्त्व तक की दस स्थितियाँ हैं, जिनमें अव्यक्त जगत् से क्रमशः लय होकर कालीरूप में मूल प्रकृति बन जाती है। इसलिए इन्हें काल की जन्मदात्री भी कहा जाता है।

दुर्गासप्तशती के ग्यारहवें अध्याय के मंगलाचरण में भी कहा गया है कि 'मैं भुवनेश्वरी देवी का ध्यान करता हूँ। उनके श्रीअंगों की शोभा प्रातःकाल के सूर्य देव के समान अरुणाभ है। उनके मस्तक पर चंद्रमा का मुकुट है। तीन नेत्रों से युक्त देवी के मुख पर मुस्कान की छटा छाई रहती है। उनके हाथों में पाश, अंकुश, वरद एवं अभय मुद्रा शोभा पाते हैं।

इस प्रकार बृहन्नीलतंत्र की यह धारणा पुराणों के विवरणों से भी पुष्ट होती है कि प्रकारान्तर से काली और भुवनेश्वरी दोनों में अभेद है। अव्यक्त प्रकृति भुवनेश्वरी ही रक्तवर्णा काली हैं। देवी भागवत के अनुसार दुर्गम नामक दैत्य के अत्याचार से संतप्त होकर देवताओं और ब्राह्मणों ने हिमालय पर सर्वकारणस्वरूपा भगवती भुवनेश्वरी की ही आराधना की थी।

उनकी आराधना से प्रसन्न होकर भगवती भुवनेश्वरी तत्काल प्रकट हो गईं। वे अपने हाथों में बाण, कमल-पुष्प तथा शाक-मूल लिए हुए थीं। उन्होंने अपने नेत्रों से अश्रुजल की सहस्रों धाराएँ प्रकट कीं। इस जल से भूमंडल के सभी प्राणी तृप्त हो गए। समुद्रों तथा सरिताओं में अगाध जल भर गया और समस्त औषधियाँ सिंच गईं।

अपने हाथ में लिए गए शाकों और फल-मूल से प्राणियों का पोषण करने के कारण भगवती भुनवेश्वरी ही 'शताक्षी' तथा 'शाकम्भरी' नाम से विख्यात हुईं। इन्होंने ही दुर्गमासुर को युद्ध में मारकर उसके द्वारा अपहृत वेदों को देवताओं को पुनः सौंपा था। उसके बाद भगवती भुवनेश्वरी का एक नाम दुर्गा प्रसिद्ध हुआ।

भगवती भुवनेश्वरी की उपासना पुत्र प्राप्ति के लिए विशेष फलप्रदा है। रुद्रयामल में इनका कवच, नील सरस्वती तंत्र में इनका हृदय तथा महातंत्रार्णव में इनका सहस्रनाम संकलित है।

मंत्र

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्वाहा।

।। त्रिपुरभैरवी ।।

क्षीयमान विश्व के अधिष्ठान दक्षिणामूर्ति कालभैरव हैं। उनकी शक्ति ही त्रिपुरभैरवी है। ये ललिता या महात्रिपुरसुन्दरी की रथवाहिनी हैं। ब्रह्माण्ड पुराण में इन्हें गुप्त योगिनियों की अधिष्ठात्री देवी के रूप में चित्रित किया गया है। मत्स्यपुराण में इनके त्रिपुरभैरवी, कोलेशभैरवी, रुद्रभैरवी, चैतन्यभैरवी तथा नित्याभैरवी आदि रूपों का वर्णन प्राप्त होता है।

इंद्रियों पर विजय और सर्वत्र उत्कर्ष की प्राप्ति हेतु त्रिपुरभैरवी की उपासना का वर्णन शास्त्रों में मिलता है। महाविद्याओं में इनका छठा स्थान है। त्रिपुरभैरवी का मुख्य उपयोग घोर कर्म में होता है।

इनके ध्यान का उल्लेख दुर्गासप्तशती के तीसरे अध्याय में महिषासुर वध के प्रसंग में हुआ है। इनका रंग लाल है। ये लाल वस्त्र पहनती हैं, गले में मुंडमाला धारण करती हैं और स्तनों पर रक्त चंदन का लेप करती हैं। ये अपने हाथों में जपमाला, पुस्तक तथा वर और अभय मुद्रा धारण करती हैं। ये कमलासन पर विराजमान हैं।

भगवती त्रिपुरभैरवी ने ही मधुपान करके महिष का हृदय विदीर्ण किया था। रुद्रयामल एवं भैरवीकुल सर्वस्व में इनकी उपासना तथा कवच का उल्लेख मिलता है। संकटों से मुक्ति के लिए भी इनकी उपासना करने का विधान है।

घोर कर्म के लिए काल की विशेष अवस्थाजनित मानों को शांत कर देने वाली शक्ति को ही त्रिपुरभैरवी कहा जाता है। इनका अरुण वर्ण विमर्श का प्रतीक है। इनके गले में सुशोभित मुंडमाला ही वर्णमाला है। देवी के रक्तलिप्त पयोधर रजोगुण सम्पन्न सृष्टि-प्रक्रिया के प्रतीक हैं। अक्षजपमाला वर्णसमान्माय की प्रतीक है। पुस्तक ब्रह्मविद्या है, त्रिनेत्र वेदत्रयी हैं तथा स्मिति हास करुणा है।

आगम ग्रंथों के अनुसार त्रिपुरभैरवी एकाक्षररूप (प्रणव) हैं। इनसे संपूर्ण भुवन प्रकाशित हो रहे हैं तथा अंत में इन्हीं में लय हो जाएँगे। 'अ' से लेकर विसर्ग तक सोलह वर्ण भैरव कहलाते हैं तथा 'क' से 'क्ष' तक के वर्ण योनि अथवा भैरवी कहे जाते हैं। स्वच्छन्दोद्योत के प्रथम पटल में इस पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। यहाँ पर त्रिपुरभैरवी को योगीश्वरी रूप में उमा बतलाया गया है।

इन्होंने भगवान शंकर को पति रूप में प्राप्त करने के लिए कठोर तपस्या करने का दृढ़ निर्णय लिया था। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि भी इनकी तपस्या को देखकर दंग रह गए। इससे सिद्ध होता है कि भगवान शंकर की उपासना में निरत उमा का दृढ़ निश्चयी स्वरूप ही त्रिपुरभैरवी का परिचायक है। त्रिपुरभैरवी की स्तुति में कहा गया है कि भैरवी सूक्ष्म वाक् तथा जगत् के मूल कारण की अधिष्ठात्री हैं।

त्रिपुरभैरवी के अनेक भेद हैं, जैसे सिद्धिभैरवी, चैतन्यभैरवी, भुवनेश्वरीभैरवी, कमलेश्वरीभैरवी, कामेश्वरीभैरवी, षट्कूटाभैरवी, नित्याभैरवी, कोलेशीभैरवी, रुद्रभैरवी आदि।

सिद्धिभैरवी उत्तरान्माय पीठ की देवी हैं। नित्याभैरवी पश्चिमान्माय की पीठ देवी हैं। इनके उपासक स्वयं भगवान शिव हैं। रुद्रभैरवी दक्षिणान्माय पीठ की देवी हैं। इनके उपासक भगवान विष्णु हैं। त्रिपुरभैरवी के भैरव वटुक हैं।

मुण्डमालातन्त्रानुसार त्रिपुरभैरवी को भगवान नृसिंह की अभिन्न शक्ति बताया गया है। सृष्टि में परिवर्तन होता रहता है। इसका मूल कारण आकर्षण-विकर्षण है। इस सृष्टि के परिवर्तन में क्षण-क्षण में होने वाली भाव क्रिया की अधिष्ठातृ शक्ति ही वैदिक दृष्टि से त्रिपुरभैरवी कही जाती है। त्रिपुरभैरवी की रात्रि का नाम कालरात्रि तथा भैरव का नाम कालभैरव है।

मंत्र ॐ हसैंहसकफ्रीं हसरौं स्वाहा।

।। धूमावती ।।

धूमावती देवी महाविद्याओं में सातवें स्थान पर परिगणित हैं। इनके संदर्भ में कथा आती है कि एक बार भगवती पार्वती भगवान शिव के साथ कैलास पर्वत पर बैठी हुई थीं। उन्होंने महादेव से अपनी क्षुधा का निवारण करने का निवेदन किया।

कई बार माँगने पर भी जब भगवान शिव ने उस ओर ध्यान नहीं दिया, तब उन्होंने महादेव को ही उठाकर निगल लिया। उनके शरीर से धूमराशि निकली। शिवजी ने उस समय पार्वती से कहा कि आपकी सुंदर मूर्ति धुएँ से ढँक जाने के कारण धूमावती या धूम्रा कही जाएगी।

धूमावती महाशक्ति अकेली हैं तथा स्वयं नियंत्रिका हैं। इनका कोई स्वामी नहीं है, इसलिए इसे विधवा कहा गया है। दुर्गासप्तशती के अनुसार इन्होंने ही प्रतिज्ञा की थी कि जो मुझे युद्ध में जीत लेगा तथा मेरा गर्व दूर कर देगा, वही मेरा पति होगा। ऐसा कभी नहीं हुआ, अतः ये कुमारी हैं, ये धन या पतिरहित हैं अथवा अपने पति महादेव को निगल जाने के कारण विधवा हैं।

नारदपांचरात्र के अनुसार इन्होंने अपने शरीर से उग्रचण्डिका को प्रकट किया था, जो सैकड़ों गीदड़ियों की तरह आवाज करने वाली थी, शिव को निगलने का तात्पर्य है, उनके स्वामित्व का निषेध। असुरों के कच्चे मांस से इनकी अंगभूता शिवाएँ तृप्त हुईं, यही इनकी भूख का रहस्य है।

इनके ध्यान में इन्हें विवर्ण, चंचल, काले रंगवाली, मैले कपड़े धारण करने वाली, खुले केशों वाली, विधवा, काकध्वज वाले रथ पर आरूढ़, हाथ में सूप धारण किए, भूख-प्यास से व्याकुल तथा निर्मम आँखों वाली बताया गया है।

स्वतंत्रतंत्र के अनुसार सती ने जब दक्षयज्ञ में योगाग्नि द्वारा अपने आपको भस्म कर दिया, तब उस समय जो धुआँ उत्पन्न हुआ, उससे धूमावती-विग्रह का प्राकट्य हुआ था।

धूमावती की उपासना विपत्ति-नाश, रोग-निवारण, युद्ध-जय, उच्चाटन तथा मारण आदि के लिए की जाती है। शाक्तप्रमोद में कहा गया है कि इनके उपासक पर दुष्टाभिचार का प्रभाव नहीं पड़ता है। संसार में रोग-दुःख के कारण चार देवता हैं।

ज्वर, उन्माद तथा दाह रुद्र के कोप से, मूर्च्छा, विकलांगता यम के कोप से, शूल, गठिया, लकवा, वरुण के कोप से तथा शोक, कलह, क्षुधा, तृषा आदि निर्ऋति के कोप से होते हैं। शतपथब्राह्मण के अनुसार धूमावती और निर्ऋति एक हैं। यह लक्ष्मी की ज्येष्ठा हैं, अतः ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न व्यक्ति जीवनभर दुःख भोगता है।

तंत्र ग्रंथों के अनुसार धूमावती उग्रतारा ही हैं, जो धूम्रा होने से धूमावती कही जाती हैं। दुर्गासप्तशती में वाभ्रवी और तामसी नाम से इन्हीं की चर्चा की गई है। ये प्रसन्न होकर रोग और शोक को नष्ट कर देती हैं तथा कुपित होने पर समस्त सुखों और कामनाओं को नष्ट कर देती हैं।

इनकी शरणागति से विपत्ति नाश तथा सम्पन्नता प्राप्त होती है। ऋग्वेदोक्त रात्रिसूक्त में इन्हें 'सुतरा' कहा गया है। सुतरा का अर्थ सूखपूर्वक तारने योग्य है। तारा या तारिणी को इनका पूर्व रूप बताया गया है। इसलिए आगमों में इन्हें अभाव और संकट को दूर कर सुख प्रदान करने वाली भूति कहा गया है।

धूमावती स्थिरप्रज्ञता की प्रतीक हैं। इनका काकध्वज वासनाग्रस्त मन हैं, जो निरंतर अतृप्त रहता है। जीव की दीनावस्था भूख, प्यास, कलह, दरिद्रता आदि इनकी क्रियाएँ हैं, अर्थात वेद की शब्दावली में धूमावती कद्रु है, जो वृत्रासुर आदि को पैदा करती हैं।

मंत्र

ॐ द्रूं द्रूं द्रूमावती ठः ठः स्वाहा।

शेष पेज 14 पर

प्रज्ञा

29 सितंबर -5 अक्टूबर, 2011

पेज 13 का शेष

।।वगलामुखी ।।

व्यष्टि रूप में शत्रुओं को नष्ट करने की इच्छा रखने वाली तथा समष्टि रूप में परमात्मा की संहार-शक्ति ही वगला है। पीताम्बराविद्या के नाम से विख्यात वगलामुखी की साधना प्रायः शत्रुभय से मुक्ति और वाक्-सिद्धि के लिए की जाती है। इनकी उपासना में हरिद्रामाला, पीत-पुष्प एवं पीतवस्त्र का विधान है।

महाविद्याओं में इनका आठवाँ स्थान है। इनके ध्यान में बताया गया है कि ये सुधासमुद्र के मध्य में स्थित मणिमय मण्डप में रत्नमय सिंहासन पर विराज रही हैं। ये पीतवर्ण के वस्त्र, पीत आभूषण तथा पीले पुष्पों की ही माला धारण करती हैं। इनके एक हाथ में शत्रु की जिह्वा और दूसरे हाथ में मुद्गर है। स्वतंत्रतंत्र के अनुसार भगवती वगलामुखी के प्रादुर्भाव की कथा इस प्रकार है- सत्ययुग में संपूर्ण जगत् को नष्ट करने वाला भयंकर तूफान आया। प्राणियों के जीवन पर आए संकट को देखकर भगवान महाविष्णु चिंतित हो गए।

वे सौराष्ट्र देश में हरिद्रा सरोवर के समीप जाकर भगवती को प्रसन्न करने के लिए तप करने लगे। श्रीविद्या ने उस सरोवर से वगलामुखी रूप में प्रकट होकर उन्हें दर्शन दिया तथा विध्वंसकारी तूफान का तुरंत स्तम्भन कर दिया। वगलामुखी महाविद्या भगवान विष्णु के तेज से युक्त होने के कारण वैष्णवी हैं।

मंगलवारयुक्त चतुर्दशी की अर्धरात्रि में इनका प्रादुर्भाव हुआ था। इस विद्या का उपयोग दैवी प्रकोप की शांति, धन-धान्य के लिए पौष्टिक कर्म एवं आभिचारिक कर्म के लिए भी होता है। यह भेद केवल प्रधानता के अभिप्राय से है अन्यथा इनकी उपासना भोग और मोक्ष दोनों की सिद्धि के लिए की जाती है।

यजुर्वेद की काठकसंहिता के अनुसार दसों दिशाओं को प्रकाशित करने वाली, सुंदर स्वरूपधारिणी 'विष्णुपत्नी' त्रिलोक जगत् की ईश्वरी मानोता कही जाती हैं। स्तम्भनकारिणी शक्ति व्यक्त और अव्यक्त सभी पदार्थों की स्थिति का आधार पृथ्वी रूपा शक्ति है। वगला उसी स्तम्भनशक्ति की अधिष्ठात्री देवी हैं।

शक्तिरूपा वगला की स्तम्भन शक्ति से द्युलोक वृष्टि प्रदान करता है। उसी से आदित्यमण्डल ठहरा हुआ है और उसी से स्वर्गलोक भी स्तम्भित है। भगवान श्रीकृष्ण ने भी गीता में 'विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्' कहकर उसी शक्ति का समर्थन किया है। तंत्र में वही स्तम्भनशक्ति वगलामुखी के नाम से जानी जाती है।

श्री वगलामुखी को 'ब्रह्मास्त्र' के नाम से भी जाना जाता है। ऐहिक या पारलौकिक देश अथवा समाज में दुःखद अरिष्टों के दमन और शत्रुओं के शमन में वगलामुखी के समान कोई मंत्र नहीं है। चिरकाल से साधक इन्हीं महादेवी का आश्रय लेते आ रहे हैं। इनके बडवामुखी, जातवेदमुखी, उल्कामुखी, ज्वालामुखी तथा बृहद्भानुमुखी पाँच मंत्र भेद हैं। कुण्डिका तंत्र में वगलामुखी के जप के विधान पर विशेष प्रकाश डाला गया है। मुण्डमालातंत्र में यहाँ तक कहा गया है कि इनकी सिद्धि के लिए नक्षत्रादि विचार और कालशोधन की भी आवश्यकता नहीं है।

वगला महाविद्या ऊर्ध्वाम्नाय के अनुसार ही उपास्य हैं। इस आम्नाय में शक्ति केवल पूज्य मानी जाती है, भोग्य नहीं। श्रीकुल की सभी महाविद्याओं की उपासना गुरु के सान्निध्य में रहकर सतर्कतापूर्वक सफलता की प्राप्ति होने तक करते रहना चाहिए। इसमें ब्रह्मचर्य का पालन और बाहर-भीतर की पवित्रता अनिवार्य है। सर्वप्रथम ब्रह्माजी ने वगला महाविद्या की उपासना की थी। ब्रह्माजी ने इस विद्या का उपदेश सनकादिक मुनियों को किया। सनत्कुमार ने देवर्षि नारद को और नारद ने सांख्यायन नामक परमहंस को इसका उपदेश किया।

सांख्यायन ने छत्तीस पटलों में उपनिबद्ध वगलातंत्र की रचना की। वगलामुखी के दूसरे उपासक भगवान विष्णु और तीसरे उपासक परशुराम हुए तथा परशुराम ने यह विद्या आचार्य द्रोण को बताई।

मंत्र

ॐ ह्लीं वगलामुखी सर्वदुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तंभय जिव्हां कीलय बुद्धि विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा।

।। मातंगी ।।

मतंग शिव का नाम है, इनकी शक्ति मातंगी हैं। मातंगी के ध्यान में बताया गया है कि ये श्यामवर्णा हैं और चंद्रमा को मस्तक पर धारण किए हुए हैं। भगवती मातंगी त्रिनेत्रा, रत्नमय सिंहासन पर आसीन, नीलकमल के समान कांतिवाली तथा राक्षस-समूह रूप अरण्य को भस्म करने में दावानल के समान हैं।

इन्होंने अपनी चार भुजाओं में पाश, अंकुश, खेटक और खड्ग धारण किया है। ये असुरों को मोहित करने वाली एवं भक्तों को अभीष्ट फल देने वाली हैं। गृहस्थ-जीवन को सुखी बनाने, पुरुषार्थ-सिद्धि और वाग्विलास में पारंगत होने के लिए मातंगी की साधना श्रेयस्कर है। महाविद्याओं में ये नौवें स्थान पर परिगणित हैं।

नारद पांचरात्र के बारहवें अध्याय में शिव को चांडाल तथा शिवा को उच्छिष्ट चांडाली कहा गया है। इनका ही नाम मातंगी है। पुराकाल में मतंग नामक मुनि ने नाना वृक्षों से परिपूर्ण कदंब-वन में सभी जीवों को वश में करने के लिए भगवती त्रिपुरा की प्रसन्नता हेतु कठोर तपस्या की थी।

उस समय त्रिपुरा के नेत्र से उत्पन्न तेज ने एक श्यामल नारी-विग्रह का रूप धारण कर लिया। इन्हें राजमातंगिनी कहा गया। यह दक्षिण तथा पश्चिमाम्नाय की देवी हैं। राजमातंगी, सुमुखी, वश्यमातंगी तथा कर्णमातंगी इनके नामांतर हैं। मातंगी के भैरव का नाम मतंग है। ब्रह्मयामल में इन्हें मतंग मुनि की कन्या बताया है।

दशमहाविद्याओं में मातंगी की उपासना विशेष रूप से वाक्सिद्धि के लिए की जाती है। पुरश्चर्यार्णव में कहा गया है-

'अक्षवक्ष्ये महादेवीं मातंगीं सर्वसिद्धिदाम्।
अस्याः सेवनमात्रेण वाक्सिद्धिं लभते ध्रुवम्।।'

मातंगी के स्थूल रूपात्मक प्रतीत विधान को देखने से यह भलीभाँति ज्ञात होता है कि ये पूर्णतया वाग्देवता की ही मूर्ति हैं। मातंगी का श्यामवर्ण परावाक् बिन्दु है। उनके त्रिनयन सूर्य, सोम और अग्नि है। उनकी चार भुजाएँ चार वेद हैं। पाश अविद्या है, अंकुश विद्या है, कर्मराशि दण्ड है। शब्द-स्पर्शादि गुण कृपाण है अर्थात पंचभूतात्मक सृष्टि के प्रतीक हैं।

कदम्ववन ब्रह्माण्ड का प्रतीक है। योगराजोपनिषद् में ब्रह्मलोक को कदम्बगोलाकार कहा गया है- 'कदम्बगोलाकारं ब्रह्मलोकं व्रजन्ति ते।' भगवती मातंगी का सिंहासन शिवात्मक महामंच या त्रिकोण है। उनकी मूर्ति सूक्ष्म रूप में यंत्र तथा पर रूप में भावनामात्र है।

दुर्गासप्तशती के सातवें अध्याय में भगवती मातंगी के ध्यान का वर्णन करते हुए कहा गया है कि वे रत्नमय सिंहासन पर बैठकर पढ़ते हुए तोते का मधुर शब्द सुन रही हैं। उनके शरीर का वर्ण श्याम है। वे अपना एक पैर कमल पर रखी हुई हैं।

अपने मस्तक पर अर्धचंद्र तथा गले में कल्हार पुष्पों की माला धारण करती हैं। वीणा बजाती हुई भगवती मातंगी के अंग में कसी हुई चोली शोभा पा रही है। वे लाल रंग की साड़ी पहने तथा हाथ में शंखमय पात्र लिए हुए हैं। उनके बदन पर मधु का हलका-हलका प्रभाव जान पड़ता है और ललाट में बिन्दी शोभा पा रही है।

इनका वल्लकी धारण करना नाद का प्रतीक है। तोते का पढ़ना 'ह्रीं' वर्ण का उच्चारण करना है, जो बीजाक्षर का प्रतीक है। कमल वर्णात्मक सृष्टि का प्रतीक है। शंखपात्र ब्रह्मरन्ध्र तथा मधु अमृत का प्रतीक है।

रक्तवस्त्र अग्नि या ज्ञान का प्रतीक है। वाग्देवी के अर्थ में मातंगी यदि व्याकरण रूपा हैं तो शुक शिक्षा के प्रतीक हैं। चार भुजाएँ वेदचतुष्टय हैं। इस प्रकार तांत्रिकों की भगवती मातंगी महाविद्या वैदिकों की सरस्वती ही हैं। तंत्रग्रंथों में इनकी उपासना का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।

मंत्र

ॐ ह्रीं क्लीं हुं मातंग्यै फट् स्वाहा।

।।कमला ।।

श्रीमद्भागवत के आठवें स्कन्ध के आठवें अध्याय में कमला के उद्भव की विस्तृत कथा आई है। देवताओं एवं असुरों द्वारा अमृत-प्राप्ति के उद्देश्य से किए गए समुद्र मंथन के फलस्वरूप इनका प्रादुर्भाव हुआ था। इन्होंने भगवान विष्णु को पतिरूप में वरण किया था।

महाविद्याओं में ये दसवें स्थान पर परिगणित हैं। भगवती कमला वैष्णवी शक्ति हैं तथा भगवान विष्णु की लीला सहचरी हैं, अतः इनकी उपासना जगदाधार-शक्ति की उपासना है। ये एक रूप में समस्त भौतिक या प्राकृतिक सम्पत्ति की अधिष्ठात्री देवी हैं और दूसरे रूप में सच्चिदानंदमयी लक्ष्मी हैं, जो भगवान विष्णु से अभिन्न हैं।

देवता, मानव एवं दानव- सभी इनकी कृपा के बिना पंगु हैं। इसलिए आगम और निगम दोनों में इनकी उपासना समान रूप से वर्णित है। सभी देवता, राक्षस, मनुष्य, सिद्ध और गंधर्व इनकी कृपा-प्रसाद के लिए लालायित रहते हैं।

महाविद्या कमला के ध्यान में बताया गया है कि इनकी कांति सुवर्ण के समान है। हिमालय के सदृश श्वेत वर्ण के चार हाथी अपनी सूंड में चार सुवर्ण कलश लेकर इन्हें स्नान करा रहे हैं।

ये अपनी दो भुजाओं में वर एवं अभय मुद्रा तथा दो भुजाओं में दो कमल पुष्प धारण किए हैं। इनके सिर पर सुंदर किरीट तथा तन पर रेशमी परिधान सुशोभित हैं। ये कमल के सुंदर आसन पर आसीन हैं।

समृद्धि की प्रतीक महाविद्या कमला की उपासना स्थिर लक्ष्मी की प्राप्ति तथा नारी-पुत्रादि के सौख्य के लिए की जाती है। कमला को लक्ष्मी तथा षोडशी भी कहा जाता है। भार्गवों द्वारा पूजित होने के कारण इनका एक नाम भार्गवी है।

इनकी कृपा से पृथ्वीपतित्व तथा पुरुषोत्तमत्व दोनों की प्राप्ति हो जाती है। भगवान आद्य शंकराचार्य द्वारा विरचित कनकधारा स्तोत्र और श्री सूक्त का पाठ, कमलगट्टों की माला पर श्रीमंत्र का जप, बिल्वपत्र तथा बिल्वफल के हवन से कमला की विशेष कृपा प्राप्त होती है।

स्वतंत्रतंत्र में कोलासुर के वध के लिए इनका प्रादुर्भाव होना बताया गया है। वाराही तंत्र के अनुसार प्राचीनकाल में ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव द्वारा पूजित होने के कारण कमला का एक नाम त्रिपुरा प्रसिद्ध हुआ। कालिका पुराण में कहा गया है कि त्रिपुर शिव की भार्या होने से इन्हें त्रिपुरा कहा जाता है।

शिव अपनी इच्छा से त्रिधा हो गए। उनका ऊर्ध्व भाग गौरवर्ण, चार भुजावाला, चतुर्मुख ब्रह्मरूप कहलाया। मध्य भाग नीलवर्ण, एकमुख और चतुर्भुज विष्णु कहलाया तथा अधोभाग स्फटिक वर्ण, पंचमुख और चतुर्भुज शिव कहलाया।

इन तीनों शरीरों के योग से शिव त्रिपुर और उनकी शक्ति त्रिपुरी कही जाती है। चिंतामणि गृह में इनका निवास है। भैरवयामल तथा शक्तिलहरी में इनके रूप तथा पूजा विधान का विस्तृत वर्णन किया गया है। इनकी उपासना से समस्त सिद्धियाँ सहज ही प्राप्त हो जाती हैं।

पुरुषसूक्त में 'श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्या' कहकर कमला को परम पुरुष भगवान विष्णु की पत्नी बतलाया गया है। अश्व, रथ, हस्ति के साथ उनका संबंध राज्य वैभव का सूचक है, पद्मस्थित होने तथा पद्मवर्णा होने का भी संकेत श्रुति में है।

भगवच्छक्ति कमला के पाँच कार्य हैं- तिरोभाव, सृष्टि, स्थिति, संहार और अनुग्रह। भगवती कमला स्वयं कहती हैं कि नित्य निर्दोष परमात्मा नारायण के सब कार्य मैं स्वयं करती हूँ। इस प्रकार काली से लेकर कमला तक दशमहाविद्याएँ सृष्टि और व्यष्टि, गति, स्थिति, विस्तार, भरण-पोषण, नियंत्रण, जन्म-मरण, उन्नति-अवनति, बंधन तथा मोक्ष की अवस्थाओं की प्रतीक हैं। ये अनेक होते हुए भी वस्तुतः परमात्मा की एक ही शक्ति हैं।

मंत्र

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह सौ जगत प्रसूत्यै स्वाहा।

पेज 9 का शेष

नवरात्रों में दुर्गापाठ व ...

है। नवदुर्गापूजा, ज्योतिःपूजा, बटुक-गणेशादिसहित कुमारी पूजा, अभिषेक, नान्दीश्राद्ध, रक्षाबन्धन, पुण्याहवाचन, मंगलपाठ, गुरुपूजा, तीर्थावाहन, मन्त्र-स्नान आदि, आसनशुद्धि, प्राणायाम, भूतशुद्धि, प्राण-प्रतिष्ठा, अन्तर्मातृकान्यास, बहिर्मातृकान्यास, सृष्टिन्यास, स्थितिन्यास, शक्तिकलान्यास, शिवकलान्यास, हृदयादिन्यास, षोडषान्यास, विलोम-न्यास, तत्त्वन्यास, अक्षरन्यास, व्यापकन्यास, ध्यान, पीठपूजा, विशेषार्घ्य, क्षेत्रकीलन, मन्त्रपूजा, विविध मुद्राविधि, आवरणपूजा एवं प्रधान पूजा आदि का शास्त्रीय पद्धति के अनुसार अनुष्ठान होता है। इस प्रकार विस्तृत विधि से पूजा करने की इच्छा वाले भक्तों को अन्यान्य पूजा-पद्धतियों की सहायता से भगवती की आराधना करके पाठ आरम्भ करना चाहिए।

साधक स्नान करके पवित्र हो आसन-शुद्धि की क्रिया सम्पन्न करके शुद्ध आसन पर बैठे, साथ में शुद्ध जल, पूजन-सामग्री और श्रीदुर्गासप्तशती की पुस्तक रखें। पुस्तक को अपने सामने काष्ठ आदि के शुद्ध आसन पर विराजमान कर दे। ललाट में अपनी रुचि के अनुसार भस्म, चन्दन अथवा रोली लगा ले, शिखा बांध लें, फिर पूर्वाभिमुख होकर तत्त्व-शुद्धि के लिए चार बार आचमन करें। उस समय निम्नांकित चार मंत्रों को क्रमशः पढ़ें -

ॐ ऐं आत्मतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।
ॐ ह्रीं विद्यातत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।
ॐ क्लीं शिवतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्वतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।

तत्पश्चात् प्राणायाम करके गणेश आदि देवताओं एवं गुरुजनों को प्रणाम करे, फिर 'पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ' इत्यादि मन्त्र से कुश की पवित्री धारण करके हाथ में लाल फूल, अक्षत और जल लेकर संकल्प करें। संकल्प करके देवी का ध्यान करते हुए पंचोपचार की विधि से पुस्तक की पूजा करें, योनि-मुद्रा का प्रदर्शन करके भगवती को प्रणाम करे, फिर मूल नवार्ण मन्त्र से पीठ आदि में आधारशक्ति की स्थापना करके उसके ऊपर पुस्तक को विराजमान करे।

इसके बाद शापोद्धार करना चाहिए। इसके अनेक प्रकार हैं। 'ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं क्रां क्रीं चण्डिकादेव्यै शापनाशानुग्रहं कुरु कुरु स्वाहा' - इस मंत्र का आदि और अन्त में सात बार जप करे। यह शापोद्धारमन्त्र कहलाता है। इसके अनन्तर उत्कीलन-मंत्र का जप किया जाता है। इसका जप आदि और अन्त में इक्कीस-इक्कीस बार होता है। यह मन्त्र इस प्रकार है - 'ॐ श्रीं क्लीं ह्रीं सप्तशति चण्डिके उत्कीलनं कुरु कुरु स्वाहा।' इसके जप के पश्चात् आदि और अन्त में सात-सात बार मृत-संजीवनी विद्या का जप करना चाहिए, जो इस प्रकार है - 'ॐ ह्रीं ह्रीं वं वं ऐं ऐं मृतसंजीवनि विद्ये मृतमुत्थापयोत्थापय क्रीं ह्रीं ह्रीं वं स्वाहा।' मारकण्डकल्प के अनुसार सप्तशती-शापविमोचन का मन्त्र यह है - 'ॐ श्रीं श्रीं क्लीं हूं ॐ ऐं क्षोभय मोहय उत्कीलय उत्कीलय ठं ठं। इस मन्त्र का आरम्भ में ही एक सौ आठ बार जप करना चाहिए, पाठ के अन्त में नहीं।'

इस प्रकार शापोद्धार करने के अनन्तर अन्तर्मातृकाबहिर्मातृका आदि न्यास करें, फिर भगवती का ध्यान करके रहस्य में बताये अनुसार नौ कोष्ठों वाले यन्त्र में महालक्ष्मी आदि का पूजन करें, इसके बाद छः अंगो सहित दुर्गासप्तशती का पाठ आरम्भ किया जाता है। कवच, अर्गला, कीलक और तीनों रहस्य - ये ही सप्तशती के छः अंग माने गये हैं। उनके क्रम में भी मतभेद है।

चिदम्बर संहिता में पहले अर्गला, फिर कीलक तथा अन्त में कवच पढ़ने का विधान है। किंतु योगरत्नावली में पाठ का क्रम इससे भिन्न है। उसमें कवच को बीज, अर्गला को शक्ति तथा कीलक को कीलक-संज्ञा दी गयी है। जिस प्रकार सब मन्त्रों में पहले बीज का, फिर शक्ति का तथा अन्त में कीलक का उच्चारण होता है, उसी प्रकार यहां भी पहले कवचरूप बीज का, फिर अर्गलारूपा शक्ति का तथा अंत में कीलक रूप कीलक का क्रमशः पाठ होना चाहिए।

साधक स्नान करके पवित्र हो आसन-शुद्धि की क्रिया सम्पन्न करके शुद्ध आसन पर बैठे, साथ में शुद्ध जल, पूजन-सामग्री और श्रीदुर्गासप्तशती की पुस्तक रखें। पुस्तक को अपने सामने काष्ठ आदि के शुद्ध आसन पर विराजमान कर दे। संकल्प करके देवी का ध्यान करते हुए पंचोपचार की विधि से पुस्तक की पूजा करें, योनि-मुद्रा का प्रदर्शन करके भगवती को प्रणाम करे, फिर मूल नवार्ण मन्त्र से पीठ आदि में आधारशक्ति की स्थापना करके उसके ऊपर पुस्तक को विराजमान करे।

पेज 12 का शेष

भगवती दुर्गा के नव स्वरूपों ...

नवरात्र के नवम् तथा अंतिम दिन समस्त साधनाओं को सिद्ध एवं पूर्ण करने वाली तथा अष्टसिद्धि नौ निधियों को प्रदान करने वाली भगवती दुर्गा के नवम् रूप मां सिद्धिदात्री की पूजा-अर्चना का विधान है। देवी भगवती के अनुसार भगवान शिव ने मां क ी इसी शक्ति की उपासना करके सिद्धियां प्राप्ति की थीं। इसके प्रभाव से भगवान का आधा शरीर स्त्री का हो गया था। उसी समय से भगवान शिव को अर्धनारीश्वर कहा जाने लगा है।

इस रूप की साधना करके साधकगण अपनी साधना सफल करते हैं तथा सभी मनोरथ पूर्ण करते हैं। वैदिक, पौराणिक तथा तांत्रिक किसी भी प्रकार की साधना में सफलता प्राप्त करने के पहले मां सिद्धिदात्री की उपासना अनिवार्य है।

साधना विधान - सर्वप्रथम लकड़ी की चौकी पर लाल वस्त्र बिछाकर मां सिद्धिदात्री की मूर्ति अथवा तस्वीर को स्थापित करें तथा सिद्धिदात्री यंत्र को भी चौकी पर स्थापित करें। तदुपरांत हाथ में लालपुष्प लेकर मां का ध्यान करें।

ध्यान मंत्र - ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे।

ध्यान के बाद हाथ के पुष्प को मां के चरणों में छोड़ दें तथा मां का एवं सिद्धिदात्री का मंत्र का पंचोपचार अथावा षोडशोपचार विधि से पूजन करें। देशी घी से बने नैवेद्य का भोग लगाएं तथा मां के नवार्ण मंत्र का इक्कीस हजार की संख्या में जाप करें। मंत्र के पूर्ण होने के बाद हवन करे तथा पूर्णाहुति करें। अंत में ब्राह्मणों को भोजन करायें तथा वस्त्र-आभूषण के साथ दक्षिणा देकर परिवार सहित आशीर्वाद प्राप्त करें। कुंवारी कन्याओं का पूजन करे और भोजन करायें। वस्त्र पहनायें वस्त्रों में लाल चुनरी अवश्य होना चाहिए क्योंकि मां को लाल चुनरी अधिक प्रिय है। कुंआरी कन्याओं को मां का स्वरूप माना गया है। इसलिए कन्याओं का पूजन अति महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य है।

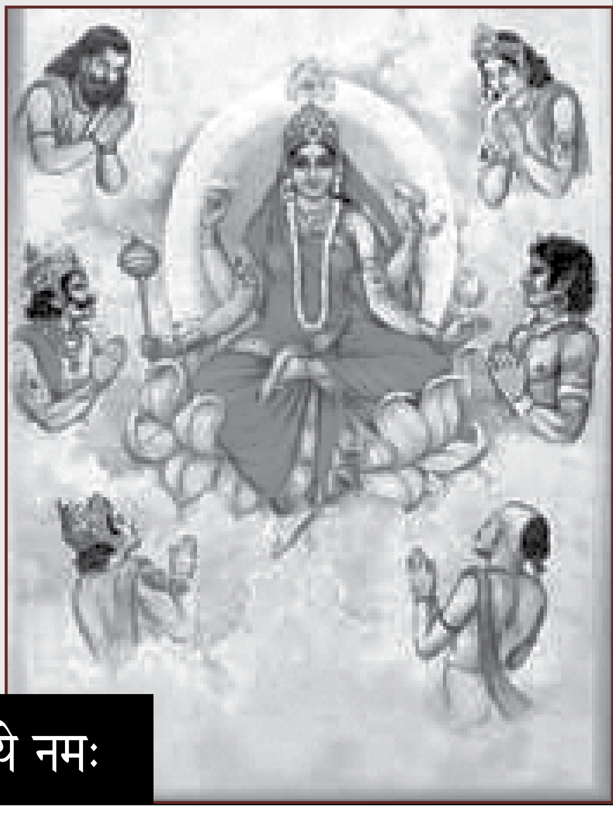

ॐ मां सिद्धिदात्री दैव्ये नमः

हमारे प्रकाशन

श्री शनिचरणानुरागी श्री श्री 1008 महामंडलेश्वर दाती जी महाराज राजस्थानी ने कई महत्वपूर्ण विषयों पर अनेकानेक पुस्तकों की रचना की है। उनके अनेक ग्रंथ तो अब भी अप्रकाशित पड़े हुए हैं। प्रभु की कृपा से हम उनकी निम्नलिखित पुस्तकों को प्रकाशित करने में सफल हुए हैं, जिनकी काफी दिनों से प्रतीक्षा की जा रही थी। आशा है, इन पुस्तकों से पाठकगण विशेष लाभ उठाने में सफल होंगे।

ज्योतिष व वास्तु

पुस्तक का नाम	मूल्य (रु.)
सरल ज्योतिष प्रवेशिका	200
सरल गोचर प्रवेशिका	200
सरल मुहूर्त प्रवेशिका	100
सरल वास्तु प्रवेशिका	150
सरल हस्तरेखा विज्ञान प्रवेशिका	150
ताजिक ज्योतिष	150
सामान्य ज्योतिष एवं खगोल	50
शनि समग्र दर्शन (प्रथम भाग)	200
शनि समग्र दर्शन (द्वितीय भाग)	200
शनि साधना के चमत्कारिक प्रयोग	100
द्वादश भावों में श्री शनिदेव	100
क्या है शनि की साढेसाती और ढैय्या	100
शनि उपासना क्यों और कैसे?	200
शनि चरित्र गाथा व शनितीर्थ महात्म्य	100
शनि शांति के अमोघ देव अनुष्ठान	100
शनिवार व्रत विधि व कथा	25
काल सर्प योग	100

स्वास्थ्य व चिकित्सा

पुस्तक का नाम	मूल्य (रु.)
भोग रोग योग	200
चमत्कार को नमस्कार	100
अद्भुत देसी नुसखे भाग - 1	100
अद्भुत देसी नुसखे भाग - 2	200
अद्भुत देसी नुसखे भाग - 3	200
दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 1	125
दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 2	200
दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 3	200
दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 4	200
दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 5	200
ग्रह-नक्षत्र शांति द्वारा रोगोपचार	80
मंत्रों द्वारा रोगोपचार	30
आसनों द्वारा रोगोपचार	30
प्राणायाम द्वारा रोगोपचार	25
रोगोपचार में उपयोगी हस्त मुद्राएं	30
रोगोपचार में उपयोगी रत्न	25
सूर्य रश्मियों के रंगों से रोगोपचार	20
तन-मन के रोगों से मुक्ति की युक्ति	25
आसनःआरोग्यता का अनुपम साधन	225
प्राणायाम	150

अध्यात्म

खुला आमंत्रण परमानन्द के लिए	100
मानुष तन दुर्लभ अति	30
हो कौन? जाओगे कहां? जानोगे कैसे?	100
जीवन शांत मन के साथ	35
तनाव मुक्त जीवन	35
गीता : मोह से मोक्ष तक की गाथा	50
लाली मेरे लाल की	125
समाधान	150
एक शाश्वत खोज	125
मर्म की बातें (I,II,III)	75
कुडलिनी जागरण	200
सफलता के सनातन सूत्र-प्रथम पुष्प	125
कार्य सफलता में बाधक तनाव	125
Living with peace of life	35
Eternal Bliss	150
Shedding of stress	50
Effectuation of Shani Adoration	200
Tiny Tips	125

संपर्क करें - श्री सिद्ध शक्ति पीठ शनिधाम ट्रस्ट, श्री शनि तीर्थ क्षेत्र असोला, फतेहपुर बेरी, महरोली, नई दिल्ली-74 फोन - 26654400, 26653600, फैक्स : 26653500